जनचौक

वंचित समुदाय और मानवाधिकार दिवस

December 10, 2024
अभय कुमार

1 min read

Share this...

हर साल 10 दिसंबर को अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस मनाया जाता है। इसी दिन, 1948 में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को अपनाया था।

दो साल बाद, संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेंबली ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें दुनिया भर के सभी देशों और संगठनों से इस दिन को मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाने का आह्वान किया गया।

यह घोषणापत्र मानव अधिकारों को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ है, जो नस्ल, रंग, जाति, लिंग, भाषा, और क्षेत्र के भेदभाव से परे, सभी के लिए समान बुनियादी अधिकारों की बात करता है।

यह घोषणापत्र इस बात पर जोर देता है कि मनुष्य की गरिमा और इज्जत का सम्मान किया जाना चाहिए, क्योंकि हम सभी एक ही मानव परिवार के सदस्य हैं। विश्व में स्वतंत्रता, न्याय, और शांति की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि सभी मनुष्यों के समान एवं अविच्छिन्न अधिकारों का सम्मान किया जाए।

गौरतलब है कि संयुक्त राष्ट्र का गठन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ था। यह वह समय था जब यूरोप के प्रमुख देश अपने-अपने हितों के लिए आपस में लड़ रहे थे, और उन्होंने दुनिया के अन्य हिस्सों को भी अपने झगड़ों में घसीट लिया। इन कड़वे अनुभवों के बाद ही संयुक्त राष्ट्र और उससे जुड़े संगठन, जिनमें मानवाधिकार संस्थाएं भी शामिल हैं, अस्तित्व में आए।

द्वितीय विश्व युद्ध से पहले, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में यथार्थवादी विचारकों का बोलबाला था, जो यह मानते थे कि सत्ता ही सब कुछ है। उनके अनुसार, राज्य की सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण है, और इसे हासिल करने का एकमात्र ...ा शक्ति को बढ़ाना है।

...विचारधारा के मुताबिक, राज्य अपनी ताकत बढ़ाने के लिए किसी भी रास्ते को अपना सकता है, और रा... का हथियारों से लैस होना चाहिए।

आसान शब्दों में कहें तो, यथार्थवादी विचारक शक्ति और ताकत में विश्वास रखते थे और मानते थे कि बलपूर्वक कुछ भी हासिल किया जा सकता है। लेकिन उनकी यह नादानी थी कि वे सुरक्षा की अवधारणा को बहुत ही सीमित अर्थों में देखते थे।

उनके अनुसार ख़तरा हमेशा बाहरी था, जबकि गरीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य समस्याएं और प्रदूषण जैसी आंतरिक चुनौतियों को वह नज़रअंदाज़ करते थे।

जबकि वास्तविकता यह है कि इन आंतरिक समस्याओं से होने वाली मौतें बाहरी आक्रमणों से कहीं अधिक हैं। इन समस्याओं को हल करने की बड़ी ज़िम्मेदारी आंतरिक व्यवस्थाओं की होती है।

फिर भी, यथार्थवादी दृष्टिकोण के समर्थक सत्ता वर्ग हथियारों की दौड़ और शक्ति बढ़ाने की होड़ में लगे रहे। इस रेस में एक राज्य ने दूसरे राज्य को अपने सामने ला खड़ा किया, जिसके परिणामस्वरूप जो टकराव हुआ, उसमें सबसे ज्यादा नुकसान आम इंसान का हुआ। सत्ता वर्ग की आंखों के सामने लाशों के ढेर लग गए, और उनके शहर मलबे और खंडहर में तब्दील हो गए।

इस संदर्भ में, आक्रामक सोच वाली यथार्थवादी विचारधारा का काफी विरोध हुआ। आलोचकों में उदारवादी बुद्धिजीवियों का एक बड़ा समूह था, जिनकी राय थी कि युद्ध किसी भी समस्या का समाधान नहीं है और संघर्षों को संस्थानों और बातचीत के माध्यम से सुलझाया जा सकता है।

इस स्थिति ने उदारवादी दृष्टिकोण को और मजबूत किया। यही उदारवादी समूह संयुक्त राष्ट्र और मानवाधिकार के दस्तावेज़ को प्रस्तुत करने में सबसे आगे था।

हालांकि उदारवादी लॉबी शांति और बातचीत की वकालत करती है, यह भी सच है कि कई उदारवादी राजनेता और विद्वान आक्रामक सोच वाले यथार्थवादी विचारकों से पूरी तरह अलग नहीं हो पाए हैं।

आज भी कई उदारवादी विद्वान यथार्थवादी धारणाओं के प्रभाव में हैं। जहां दोनों के बीच रणनीतियों पर मतभेद हैं, वहीं दोनों राष्ट्रहित की "पवित्रता" और तथाकथित "अराजकता" पर आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में विश्वास रखते हैं।

अफ़सोस की बात है कि अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में अब भी ऐसे लोग भरे हुए हैं, जो शक्ति की पूजा करते हैं और अपने देश के सत्ता वर्ग के स्वार्थ के सामने मानवता के हितों को बलिदान कर देते हैं।

← ी सोच काफी हद तक यथार्थवादी दृष्टिकोण के अनुरूप होती है, और कई बार वे लिबरल शब्दावली क ाल कर दुनिया को भ्रमित करते हैं। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्र आज भी युद्ध रोकने और शांति स्था → में विफल साबित हो रहा है।

हालांकि, इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार दस्तावेज़ और घोषणापत्र आम जनता के पक्ष में हैं, लेकिन उन्हें पूरी ईमानदारी से लागू नहीं किया जा रहा है। गरीब देशों और मज़लूम समुदायों के लोग इन नीतियों को अमल में लाने की स्थिति में नहीं हैं।

जिनके पास पैसा है, वे इन संगठनों को पर्दे के पीछे से नियंत्रित करते हैं, और यही कारण है कि उत्पीड़ित वर्गों और गरीब देशों के हितों की अनदेखी की जाती है। फ़िलिस्तीन में जो अत्याचार हो रहे हैं, क्या वह सब होता अगर इन संस्थानों में वंचित तबकों के लोगों को शक्ति दी गई होती?

इन विरोधाभासों को उजागर करने का उद्देश्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों के महत्व को खारिज करना नहीं है, और न ही निराश होकर किनारा कर लेने की सलाह दी जा रही है। हमें संयुक्त राष्ट्र के इतिहास और उसके मानवाधिकार दस्तावेज़ों को पढ़ने की जरूरत है ताकि कमजोर लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिए उनका सही उपयोग किया जा सके।

मेरा मानना है कि मानवाधिकारों को स्कूलों और कॉलेजों के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए। जब तक हम कानून को सही तरीके से नहीं जानेंगे, हम इसका उपयोग कमजोरों के हित में नहीं कर पाएंगे।

उदाहरण के तौर पर, संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार घोषणापत्र में कहा गया है कि सभी मनुष्य समान हैं और उनके समान अधिकार हैं। सभी मनुष्य भाईचारे के बंधन से जुड़े हुए हैं, और सभी के पास तर्क, चेतना और विवेक है।

यह घोषणापत्र के अनुच्छेद 1 में कहा गया है। लेकिन वास्तविकता यह है कि आज भी लोग जाति, धर्म, नस्ल, लिंग, भाषा और क्षेत्र के आधार पर भेदभाव का सामना कर रहे हैं।

हमारे देश में आज भी जाति-पात का कलंक ख़त्म नहीं हुआ है। धर्म की राजनीति और रूढ़िवाद लगातार बढ़ रहे हैं। मुस्लिम विरोधी प्रचार तेजी से फैल रहा है। हर दिन मुसलमानों को निशाना बनाया जा रहा है और उनकी धार्मिक भावनाओं को आहत किया जा रहा है।

भारत का संविधान और मानवाधिकार दस्तावेज़ सभी को समान अधिकार, स्वतंत्रता, और भाईचारे की बात करते हैं, लेकिन भारत के उत्पीड़ित वर्गों पर तरह-तरह के अत्याचार किए जा रहे हैं।

दक्षिणपंथी संगठन अल्पसंख्यकों को निशाना बनाकर राजनीति कर रहे हैं। उनकी धार्मिक आस्थाओं और पूजा स्थलों पर हमले हो रहे हैं। हालात इतने खराब हो चुके हैं कि नमाज़ पढ़ने वाले हर मुसलमान को यह डर सता रहा है कि कब उसकी मस्जिद पर सर्वे का आदेश आ जाए और उसे विवादास्पद घोषित कर दिया जाए।

← के आकाओं को कौन समझाए कि एक लोकतांत्रिक राज्य का सबसे पहला कर्तव्य अपने नागरिकों को ा की स्वतंत्रता प्रदान करना, उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना और उनके विकास का मार्ग प्रशस्त करना है नोकतांत्रिक राज्य में किसी भी प्रकार की गुलामी और असमानता के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए →

जहां शोषण को हमेशा के लिए समाप्त करने का प्रयास होना चाहिए, वहां शोषण बढ़ता ही जा रहा है। मानवाधिकारों का वास्तविक अर्थ यह है कि किसी भी व्यक्ति को नुकसान न पहुंचे, उत्पीड़न समाप्त हो और कानून का शासन स्थापित हो। किसी को भी अवैध तरीके से गिरफ्तार नहीं किया जाना चाहिए।

लेकिन सच्चाई तो यह है कि जहां हमारे देश के रॉकेट अंतरिक्ष तक पहुंच रहे हैं, वहीं इंसान आज भी सिर पर मैला ढोने को मजबूर है। लाखों लोग आज भी खुले आसमान के नीचे सड़कों पर सोने को मजबूर हैं, जबकि सत्ता वर्ग दिन-रात तरक्की के कसीदे पढ़ता रहता है।

जहां संविधान आलोचना और विरोध को लोकतंत्र का अभिन्न हिस्सा मानता है, वहीं हर दिन किसी न किसी मासूम का एनकाउंटर हो रहा है और हजारों मुसलमानों और अन्य समुदायों के घरों को बुलडोज़र से गिरा दिया जा रहा है।

जहां शिक्षा और नौकरियों से वंचित तबकों को अलग-थलग रखा गया है, वहीं जेलों में दलित, मुस्लिम, आदिवासी और अन्य पिछड़ी जातियों के लोग सबसे अधिक संख्या में बंद हैं। जहां लोकतंत्र में आलोचना को एक जरूरी